ISSN: ISSN: 2583-5149 | Special Edition Vol. 2 | March 2026

गीता के कर्मयोग, नैतिक जीवन एवं नेतृत्व का मनुष्य जीवन में आध्यात्मिक प्रभाव

कुमारी शीतला
शोधछात्रा
दर्शनविभाग केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयभोपाल परिसर

सारांश

भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध शाखाओं में श्री मद्भागवत गीता का धार्मिक और आध्यात्मिक रूप से ही नहीं अपितु दार्शनिक ग्रंथ के रुप में भी प्रतिष्ठा प्राप्त है। यह ग्रंथ महाभारत के भीष्मपर्व में संग्रहीत हैं। जिसमें श्रीकृष्ण और अर्जुन के मध्य हुए संवाद में मानव जीवन के विविध गूढतम समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया गया है। युद्ध की तनावपूर्ण स्थिति में भी आत्मा, कर्म, धर्म, योग और मुक्ति जैसे दार्शनिक विषयों में व्याख्या करता है। गीता के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि यह केवल तत्कालीन सन्दर्भों तक सीमित नहीं है अपितु सार्वभौमिक और सर्वकालिक है। गीता का उपदेश नैतिक, दार्शनिक,आध्यात्मिक,व्यावहारिक रूप से मानव जीवन को दिशा प्रदान करता है। वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है , ऐसे में गीता का ज्ञान अत्यंत प्रासंगिक है। गीता भारतीय संस्कृति, आध्यात्म, और जीवन - दर्शन की धरोहर है। गीता में ज्ञान-कर्म -भक्तियोग, कर्तव्यबोध, स्वधर्म पालन, आदि वर्णित है। ज्ञानयोग, भक्तियोग, और कर्मयोग। इनमें से कर्मयोग को सर्वाधिक व्यावहारिक, सहज और जीवनोपयोगी माना गया है। गीता में कर्मयोग का स्वरूप निष्काम कर्म, कर्तव्य बोध, समत्व बुद्धि. और स्वधर्म पालन पर आधारित है। यह योग व्यक्ति को कर्म से भागने की नहीं, बल्कि कर्म में पूर्ण तन्मयता के साथ स्थित होने की प्रेरणा देता है।कर्मयोग की यह अवधारणा केवल क्रिया के बाह्य रूप तक सीमित नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति के आंतरिक भावों, मनोवृत्तियों और चेतना के स्तर पर परिवर्तन की मांग करती है। इसका मूल उद्देश्य है 'कर्म करते हुए भी आसक्ति और फल की इच्छा से मुक्त रहना।' यह दृष्टिकोण न केवल व्यक्ति को आत्मिक रूप सेपरिपक्क बनाता है, बल्कि उसे सामाजिक उत्तरदायित्वों के प्रति सजग भी करता है ।

इस शोध पत्र कर्मयोग, नैतिकजीवन, नेतृत्व से संबंधित दार्शनिक एवं आध्यात्मिक पक्षों का अध्ययन किया गया है। समकालीन समाज की समस्याओं के समाधान करने में उत्तम मार्गदर्शक सिध्द हो सकता है। अतः गीता में निहित कर्मयोग, नैतिक जीवन, नेतृत्व की अवधारणा को समझने के लिए आधुनिक जीवन में उसकी उपयोगिता और प्रासंगिकता को दर्शाने का प्रयत्न है ।

प्रस्तावना - भारतीय दर्शन की परंपरा में श्रीमद्भगवद्गीता केवल एक धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि अमूल्य निधि एवं मानव जीवन के समग्र विकास का मार्गदर्शक ग्रंथ है। यह ग्रंथ कर्म, नैतिकता और नेतृत्व जैसे जीवन के मूलभूत मूल्यों को आध्यात्मिक दृष्टि से परिभाषित करता है । गीता सहस्रों वर्षो के पश्चात् भी मानव समाज के लिए हितकारक , प्रांसगिक,एवं उपादेय सिध्द हो रही है । श्रीमद्भागवद्गीता के 18 अध्याय महाभारत के भीष्म पर्व के 23 से 40 तक के अध्याय है इसमें श्लोकों की संख्या 700 है । गीता महाभारत के युद्धक्षेत्र में अर्जुन के अन्तर्द्वन्द्व को शान्त करते हुए क्या करना चाहिए और क्यों करना चाहिए यह समझाने के लिए उपदेश दिया गया जो कि आज के संघर्षपूर्ण और मूल्य-संकट से ग्रस्त जीवन में भी उतना ही प्रासंगिक है। "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" गीता का कर्मयोग मनुष्य को कर्तव्यनिष्ठ बनाता है, नैतिक जीवन आत्मिक शुद्धि की ओर ले जाता है और उसका नेतृत्व-दर्शन सेवा, विवेक तथा जिम्मेदारी का आदर्श प्रस्तुत करता है। इस प्रकार गीता के ये सिद्धांत मनुष्य के जीवन पर गहरा आध्यात्मिक प्रभाव डालते हैं और उसे एक संतुलित, सार्थक एवं उद्देश्यपूर्ण जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं । गीता का समग्र दृष्टि से अध्ययन करने पर पता चलता है कि समकालीन दृष्टिकोण से भी अत्यन्त प्रासंगिक है । कर्मयोग का सिद्धान्त कर्तव्य पालन , फलासक्ति का त्याग , निष्काम कर्म , समत्व भाव , सेवा भाव को महत्व देता है । जो मानव को अपने कर्तव्य का बोध कराता है ।

कर्मयोग - कर्मयोग का अर्थ- कर्म द्वारा आत्म-साक्षात्कार और मोक्ष प्राप्त करना ।

कर्म दो प्रकार के होते हैं- सकाम और निष्काम। सकाम कर्म बन्धन के जनक हैं, निष्काम कर्म बन्धन के उच्छेदक हैं । हम किसी कामना या इच्छा से प्रेरित होकर ही शारीरिक या मानसिक कर्म करते हैं, यही सकाम कर्म कहा जाता है। उदाहरणार्थ, स्त्री, पुत्र, धन आदि सभी के लिये किये गये कर्म सकाम हैं । हम कामना से प्रेरित हो या फलाकांक्षा के वशीभूत हो कर्म करते हैं तथा उसका शुभ या अशुभ फल भोगते हैं। पुनः कामना से आक्रान्त ही कर्म करते हैं और फल भोगते हैं। इस प्रकार कर्म की अनवरत धारा चलती रहती है। इस कर्म बन्धन के कारण ही हम नाना योनियों में भ्रमण करते रहते हैं। दूसरे प्रकार का कर्म निष्काम-कर्म है। इसमें कामनाओं का सर्वथा अभाव रहता है। इन कर्म से बन्धन नहीं होता क्योंकि बन्धन के मूल कारण कामना का इसमें अभाव रहता है।

गीता में कर्मयोग का तात्पर्य निष्काम कर्म से ही है। निष्काम कर्म तृष्णारहित कर्म है। तृष्णा के अभाव में मनुष्य कर्म करते हुए कर्म-फल का कारण नहीं बनता । निष्काम-कर्म ही गीता में कर्मयोग कहा गया है। इसका उपदेश करते हुए भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूमा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ।।[1]

'तेरा कर्म करने में ही अधिकार है. उसके फलों में कभी नहीं। इसलिए तु कर्मों के फल का हेतु न हो तथा तेरी कर्म में आसक्ति भी हो।' अर्जुन को निमित्त बना कर भगवान् संसार को उपदेश दे रहे कि मानव कर्म करने में ही स्वतन्त्र है, फल भोगने में नहीं। मनुष्य जो जो भी कर्म करता है उसका फल किस जन्म में और कहा किस प्रकार प्राप्त होगा , इसका ज्ञान मनुष्य को नही है, अतः फल का विधान करना विधाता के अधीन है।

निष्काम-कर्म के दो अंग हैं- कर्त्तापन या ममता का त्याग और आसक्ति या तृष्णा का त्याग। किसी भी कायिक या मानसिक कर्म में कर्तृत्व (मैं इस कार्य का कर्त्ता हूँ।) का अभाव और कामना का अभाव (निस्पृहभाव से कर्म करना) यदि रहे तो वह कर्म निष्काम या अनासक्त कर्म कहलाता है। यह कर्म बन्धन का साधक नहीं बाधक है। भूजे हुए बीज में वपन शक्ति नहीं होती, उसी प्रकार राग-द्वेष से रहित कर्म में बन्धन की शक्ति नहीं होती है। इस प्रकार के कर्म को करता हुआ भी मनुष्य अकर्त्ता है क्योंकि इन कर्मों में फलोत्पादिका शक्ति नहीं होती।

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥[2]

हे अर्जुन! आसक्ति को त्यागकर योग में स्थित होकर कर्म करो। सिद्धि और असिद्धि (सफलता-असफलता) में समान भाव रखना ही योग है ।

नैतिक जीवन एवं नेतृत्व -

शरणागत के प्रति आचरण - भगवान श्री कृष्ण और अर्जुन के मध्य संवाद के दौरान अर्जुन श्री कृष्ण के प्रति पूर्ण शरणागति का भाव प्रदर्शित करता है। जिस तरह भगवान श्री कृष्ण अर्जुन की सारी बातें धैर्य से सुनते हैं उसके उपरांत अर्जुन की समस्याओं का समाधान करते हैं। अर्थात हमारे जीवन में भी ऐसी कई परिस्थितियां बनती हैं उस समय उस शरणागत की उपेक्षा किए बिना उसकी समस्याओं को सुनकर उसके जीवन का मार्ग प्रशस्त करना चाहिए। श्रीमद् भागवत गीता में मन को मनुष्य का शत्रु और मित्र दोनों बताया गया है।

बन्धुरात्माऽऽत्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः ।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ।।[3]

आत्मतुष्टि - गीता में आत्मतुष्टि का अर्थ शारीरिक सुख या अहंकार से जुड़ी संतुष्टि नहीं है, बल्कि आत्मा में स्थित होकर मिलने वाली गहरी शांति और तृप्ति है। मनुष्य अपनी सारी इच्छाओं को त्याग कर अपने आत्मा में ही संतुष्ट रहता है तब वह स्थितप्रज्ञ होता है ।

प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थ मनोगतान्।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते॥[4]

जिस वक्त हम सांसारिक सुख सुविधाओं के बारें में चिन्तन करते हैं तब उसके प्रति हमारी आसक्ति बढती जाती है। अतः इस स्थिति में मनुष्य सही गलत का विवेक नही कर पाता और अपनी कामनाओं की पूर्ति में अत्यंत उत्तेजित रहता है। किंतु इनके कारण ही दु:ख भी प्राप्त होता है। इसलिए आत्मसंतुष्टि से मनुष्य सर्वोच्च स्तर को प्राप्त करता है गीता के यह दो श्लोक में जीवन को व्यवस्थित करने का सम्पूर्ण सार क्षिपा हुआ है -

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते ।
सङ्गगात्संञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते।।[5]
क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृतिभ्रशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ।।[6]

भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में अनर्थों कि श्रेणी बतायी है - जो मनुष्य के पतन का कारण है। मनुष्य को इसलिए अपने विवेक का ही आलम्बन लेना चाहिए। इन्द्रिय जनित विषयों के चिन्तन से क्रमशः आसक्ति ,सम्मोह, स्मृतिविभ्रम , बुध्दिनाश, और जीवन का पतन होता है । मानसिक शांति - मनुष्य जीवन को सुव्यवस्थित और सुखमय बनाने के मन की शान्ति आवश्यक है । संवेगों को कैसे नियंत्रित करें इसके लिए गीता में बहुत सुन्दर उपदेश दिया गया है -

दुखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतम्पृहः।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ।।[7]

निष्काम कर्म - मनुष्य को आसक्ति रहित होकर कर्म करना चाहिए अर्थात् कर्म स्वत: फल का उत्पादक है । जब हम फल की इच्छा से कोई कार्य करते हैं तो सफलता मिलने सुख एवं असफल होने पर दु:ख और निरासा प्राप्त होता है । इसलिए ईश्वर को याद करते हुए फलासक्ति से रहित होकर निष्काम भाव से किया गया कर्म निश्चय ही अच्छा होता है।

इस तरह के कर्म - कर्मयोग का प्रेरक है साथ ही स्व नेतृत्व हेतु सत्प्रेरक है।

नि:श्वार्थ कर्म-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽसवकर्मणि ॥[8]

मनुष्य जीवन में आध्यात्मिक प्रभाव -

उपनिषद् के ज्ञान को सार रूप में भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में अर्जुन को उपदेश रूप में दिया है अर्थात् गीता उपनिषदों का सार है। गीता ज्ञान का अथाह सागर है इसका कोई पारावार नहीं है । यहां अनन्त अनुभवों एवं भावों का सम्मेलन है। जीव के हर दशा का वर्णन है इसलिए सर्वशास्त्रमयी गीता का ज्ञान होने से समस्त शास्त्रों का ज्ञान हो जाता है। महाभारत में गीता के लिए लिखा गया है - सर्वशास्त्रमयी गीता (भीष्म पर्व ४३/२) श्रीमद्भगवत गीता में पद-पद पर आध्यात्म का चिन्तन किया गया है । चूंकि आध्यात्म के बारे में विचार करते हैं तब उसे ब्रह्मतत्त्व, जीवतत्व, जगततत्व और पुरुषोत्तम के माध्यम से निरुपित किया गया है। श्रीमद्भगवत गीता में ब्रह्मतत्त्व - गीता में ब्रह्मतत्त्व का विवेचन अष्टम एवं त्रयोदश अध्याय में प्राप्त होता है। गीता में ब्रह्म का सगुण एवं निर्गुण दोनों रूप प्राप्त है क्योंकि ये दोनों उस परमतत्व के रूप है। दोनों में सर्वथा विरोधाभाव है।

सर्वेन्द्रिय गुणाभासं सर्वेन्द्रिय विवर्जितम् ।
असक्तमं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुण भोक्तृ च।।[9]

वह स्वयं समस्त इन्द्रियों से हीन है। वह सभी तरह के देहादिक सम्बन्धों से रहित हैं परन्तु सभी को धारण करता है। वह निर्गुण है तथापि गुणों का भोक्ता है वह न तो सत् और न तो असत् कहा जाता है। जैसा -

अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते।[10]

जीवतत्व -जीव को गीता में ईश्वर का एक अंश कहा गया है-

ममैवांशो जीवलोके जीव भूतः सनातनः ।[11]

जीवात्मा परमात्मा का सनातन अंश है। इससे स्पष्ट होता है कि जीव अंश है और परमात्मा अंशी। इन्द्रिय, मन, अहंकार तथा शरीर की उपाधियों से भरा हुआ और पृथक् पृथक् किया गया आत्मा ही जीव है। आत्मा एक है पर उपाधि भेद के कारण वह अनेक जीवों के रूप में प्रतीत होता है।

श्रीमद्भगवद्गीता में जगततत्त्व-

जगत की उत्पत्ति, स्थिति एवं प्रलय भगवान के कारण है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान को समस्त भूतों का सनातन अविनाशी अव्यय बीज बताया गया है ।

'बींज मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम्।[12]

श्रीमद्भगवद्गीता में पुरुषोत्तम- पुरुषोत्तम तत्व श्रीमद्भगवद्गीता का परम रहस्ययुक्त तथा महत्वपूर्ण आध्यात्मिक तत्व माना जाता है। श्रीमद्भगवद्गीता में अव्यक्त तथा अक्षर शब्द का प्रयोग व्यक्ताव्यक्त से परे प्रकृति पुरूष के ऊपर एक विशिष्ट तत्व के लिये भी किया गया है।

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः ।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः।।[13]

अर्थात् जीव मात्र भी उस ब्रह्म का अंश है जो मनुष्य के अन्दर एकत्व की भावना का प्रकाशन करता है।

निकर्ष-

गीता का कर्मयोग मनुष्य को निष्काम भाव से कर्म करने के लिए प्रेरित करता है जब कर्मफल का आसक्ति को त्यागकर कर्म किये जाते है तब मनुष्य मानसिक शांति ,आत्मसंयम , संतुलन प्राप्त करता है । जीवन सुव्यवस्थित और तनाव कम होता है । नैतिक जीवन में गीता सत्य, अहिंसा, कर्तव्यनिष्ठा और आत्मनियन्त्रण पर बल देती है । आचरण को शुद्ध , समाज में सद्भाव विश्वास को बढता है । नैतिकता से युक्त जीवन व्यक्ति को आत्मगौरव, आत्मसंतोष और आध्यात्मिक बनाता है । एक नैतिक व्यक्ति ही समाज को अच्छा नेतृत्व कर सकता है। लोककल्याण ,निष्पक्ष निर्णय और अहंकार से मुक्त होकर सेवा भाव से प्रेरित रहता है । गीता का कर्मयोग नैतिकजीवन को भौतिक और आध्यात्मिक दोनों रूपों समृद्ध करते है। जिससे मानव जीवन सार्थक और संतुलित बना रहें ।

सन्दर्भ-

1. श्रीमद्भगवद्गीता- 2/47
2. श्रीमद्भगवद्गीता- 2/48
3. श्रीमद्भगवद्गीता- 6/6
4. श्रीमद्भगवद्गीता- 2/55

5. श्रीमद्भगवद्गीता- 2/62
6. श्रीमद्भगवद्गीता- 2/63
7. श्रीमद्भगवद्गीता- 2/56
8. श्रीमद्भगवद्गीता- 2/47
9. श्रीमद्भगवद्गीता- 13/14
10. श्रीमद्भगवद्गीता- 13/12
11. श्रीमद्भगवद्गीता- 15/7
12. श्रीमद्भगवद्गीता- 7/10
13. श्रीमद्भगवद्गीता- 15/18
14. भगवद्गीता। अनुवाद और व्याख्याः स्वामी विवेकानंद। रामकृष्ण मिशन, 2005
15. राधाकृष्णन, एस। द भगवद्गीता. हार्पर कॉलिन्स, 2013
16. शर्मा, अरविंद। फिलॉसफी ऑफ कर्मयोगः ए स्टडी इन द भगवद्गीता. मोतीलाल बनारसिदास, 1999।
17. राधाकृष्णन, 'भगवद्गीता', राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली,1969, पृ. 16
18. श्रीमद्भगवद्गीता माहात्म्य श्लोक, 13, गीता प्रेस, गोरखपुर
19. 19.भागीरथ दीक्षित भगवद्गीता एक नया अध्ययन प्रथम संस्करण 1987 नवा भारत प्रिंटिंग प्रेस शाहदरा दिल्ली पृष्ठ-2
20. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में गीता की प्रासंगिकता, प्रमोद कुमार यादव, शोधार्थी हिंदी विभाग, हैदराबाद, पृष्ठ स. 15-16
21. श्रीमदभगवद्गीता 6.6
22. संस्कृत वाक्य में निहित विविध विमर्शः एक अवलोकन श्रीमद्भगवद्गीत यथारूप,श्री श्रीमद् ए. सी. भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद, भक्तिवेदांत बुक ट्रस्ट श्लोक
23. गीता की व्याख्या, पृष्ठ सं. 207
24. डॉ. रविन्द्र कुमार शर्मा "गीता में कर्मयोग की दार्शनिक व्याख्या" वर्ल्ड आर्गेनाइजेशन आफ अकेडमिक रिसर्च, वाल्यूम -13 1 जनवरी - जून 2025
25. ऋचा राजपुत,"श्रीमद्भगवद्गीता के नैतिक, दार्शनिक और प्रबंधन सिध्दान्तो की आधुनिक सन्दर्भ संबंध में प्रासंगिता" अन्थोलॉजी द रिसर्च , 2025